4

यीशु और ''क्षमा न किया जा सकने वाला पाप''

(मत्ती 12:22-35)

इस पाठ का आरम्भ मैं एक प्रयोग के साथ करना चाहता हूं। गत माह के दौरान यदि आप के मन में हाथियों की बात नहीं आई है, तो कृपया अपना सिर हिलाएं।[1] मेरे ख्याल से आप ने सिर हिला दिया है। अब इस प्रयोग का दूसरा भाग देखते हैं: अगले पन्द्रह सेकंड तक हाथी का विचार अपने मन में बिल्कुल न आने दें।

आप के मन में या तो हाथियों की बात आई है या आप ने उनके बारे में सोचने की कोशिश की है, की है न? आप ने पिछले कई महीनों में हाथियों के बारे में सोचा नहीं होगा, परन्तु जैसे ही मैंने कहा कि ''हाथियों का ख्याल अपने मन में न लाएं'' तो आप अपने आप को रोक नहीं पाए।

बचपन में बाइबल की इस आयत को देख कर मेरे साथ ऐसा ही हुआ था:

> इसलिए मैं तुम से कहता हूं कि मनुष्य का सब प्रकार का पाप और निन्दा क्षमा की जाएगी, परन्तु पवित्र आत्मा की निन्दा क्षमा न की जाएगी। जो कोई मनुष्य के पुत्र के विरोध में कोई बात कहेगा, उसका यह अपराध क्षमा किया जाएगा, परन्तु जो कोई पवित्र आत्मा के विरोध में कुछ कहेगा, उसका अपराध न तो इस लोक में और न ही परलोक में क्षमा किया जाएगा (मत्ती 12:31, 32)।

मैं कभी पवित्र आत्मा के विरोध का विचार अपने मन में नहीं लाया था, या अपने जीवन में कभी पवित्र आत्मा के विरुद्ध नहीं बोला था। पर यह पढ़ते ही मेरे मन में यह विचार आया कि ''मुझे पवित्र आत्मा के विरुद्ध कोई बात नहीं कहनी चाहिए,'' और मैं अपने आप को रोकने की कोशिश करने लगा। मैंने यह पढ़ा हुआ था कि मन में कोई बुरा विचार आने पर किसी दूसरी बात पर ध्यान लगा लेना चाहिए। मत्ती 12:31, 32 पढ़ने के बाद कुछ देर के लिए मैं धीरे-धीरे गुनगुनाने लगा ताकि मेरे मन में पवित्र आत्मा के प्रति बुरे विचार आएं ही न।

आप इसे मेरी मूर्खता कह सकते हैं, पर मैं क्षमा न किए जाने वाला पाप यानी पवित्र आत्मा के विरुद्ध बोलने और आप के साथ अध्ययन करना चाह रहा हूं। मैं चाहता हूं कि हम इस विषय को संदर्भ में भी देखें। इस विषय पर मैंने कभी भी व्याख्यात्मक पाठ सुना या पढ़ा नहीं है। परन्तु हम इस पाठ में यही ढंग अपनाएंगे।

दिवंगत जी. सी. ब्रिवर ने कहा था कि बहुत से लोगों ने उनसे पवित्र आत्मा के विरुद्ध पाप के बारे में पूछा था कि वह क्या है, और यह प्रश्न पूछने वाले लोग चार तरह के थे (1) कुछ तो

सचमुच यह जानना चाहते थे कि यह पाप क्या है ?, (2) कुछ केवल उत्सुकता वश, (3) कुछ अपनी शिक्षा को बनाए रखना चाहते थे, और (4) कुछ को डर था कि कहीं उन्होंने पवित्र आत्मा के विरुद्ध कुछ बोल न दिया हो। चौथी तरह के लोगों में बहुत गम्भीर और विश्वासी लोग थे, जो इस भय में रहते थे कि उन्होंने क्षमा न किया जाने वाला या ऐसा पाप किया है, जिसकी क्षमा नहीं हो सकती। मेरी दोस्त तीन साल इसी बात के कारण परेशान रही थी, अत: मुझे सप्ताह में एक दो बार बुला लेती थी ताकि मैं उसे यह विश्वास दिला सकूं कि उसने कोई पाप नहीं किया।

इन आयतों से इस पाप के बारे में मुझे सब कुछ तो नहीं पता, पर पिछले सालों के दौरान मैंने कई बातें सीखी हैं: (1) पवित्र आत्मा के बारे में कुछ सोचना मूर्खता भरी बात करना ही पाप नहीं है। कुछ कहने भर से ही यह पाप नहीं हो जाता। (2) यदि आप को यह डर है कि कहीं आप से यह पाप न हो जाए तो आप ने यह पाप नहीं किया है। (मुझे उम्मीद है कि मेरी बात का कारण आगे स्पष्ट हो जाएगा।)

आइए मत्ती 12 अध्याय की ओर चलते हैं। (आप इससे मिलता वचन मरकुस 3 भी देखें[2] और उसे दिमाग में रखें, क्योंकि उस अध्याय में हम कई बातों पर ध्यान देंगे।)

यीशु गलील की महान सेवकाई में व्यस्त था, शायद वह कफ़रनहूम में वापस चला गया था। ''तब लोग एक अन्धे-गूंगे को जिसमें दुष्टात्मा थी, उसके पास लाए; और उसने उसे अच्छा किया और वह बोलने और देखने लगा'' (आयत 22)। यहां एक तिहरा आश्चर्यकर्म हुआ था: यीशु ने एक अन्धे को देखने योग्य बना दिया था, उसने इस मनुष्य को, जो पहले गूंगा था, बोलने योग्य बना दिया और उसमें से दुष्टात्मा को निकाला।

''इस पर सब लोग चकित हो कर कहने लगे, यह क्या दाऊद की सन्तान है ?'' (आयत 23)। अंग्रेज़ी की (न्यू इंटरनैशनल वर्जन) बाइबल में इसका अनुवाद है, ''क्या यह दाऊद की सन्तान हो *सकता है*?''। ''दाऊद की सन्तान'' मसीहा को कहा गया था। लोगों के कहने का अभिप्राय था कि ''यीशु मसीहा वाले तो काम कर रहा है परन्तु उसने वह शाही लिबास नहीं पहना जैसे माना जाता था कि मसीहा पहनेगा। वह शानो-शौकत के साथ नहीं आया था।'' उनके मनों में एक प्रश्न था। उन्हें लगता था कि यीशु, मसीह हो सकता है, परन्तु विश्वास नहीं था।

दोष लगाने की भूमिका (मत्ती 12:24-30)

हम बाइबल के उस भाग में आ गए हैं, जिसको मैं ''दोष लगाने की भूमिका'' का नाम दे रहा हूं। आयत 24 आरम्भ होती है परन्तु ''फरीसियों ने सुना।'' क्योंकि यह पाप जिसे यीशु ने क्षमा न होने योग्य पाप कहा, फरीसियों ने ही किया था, इसलिए उनके बारे में जानकारी होना आवश्यक है। हमें इस बात को संदर्भ में रखना है। मत्ती 11 अध्याय में वापस जाकर फरीसियों को हर जगह यीशु के पीछे जाना आरम्भ करते देखें। वे यीशु की आलोचना करते थे; वे यीशु को उलझाने की कोशिश करते थे; उनकी हर बात ऐसी होती थी, जिससे यीशु की बदनामी हो। मत्ती 11:19 में उन्होंने कहा कि वह ''पेटू और पियक्कड़ मनुष्य, महसूल लेने वालों और पापियों का मित्र'' है। मत्ती 12 के पहले भाग में वे दो बार सब्त को तोड़ने के सम्बन्ध में यीशु से झगड़ा करने के लिए आए। अब हम मुख्य वचन पर आ गए हैं: ''तब फरीसियों ने बाहर जा कर उसके विरोध में सम्मति की कि उसे किस प्रकार *नष्ट करें*'' (मत्ती 12:14)।

क्षमा न होने योग्य पाप की यीशु की बात पर आकर ध्यान रखें कि हम परमेश्वर के विश्वासी लोगों की बात नहीं कर रहे, जो अनजाने में यीशु की सेवकाई के बारे में कोई मूर्खता वाली बात करते हैं। हम उन लोगों की बात कर रहे हैं, जो बहुत समय से यह कह रहे हैं। मत्ती 12:24 में फरीसियों की बात उस दिशा के कारण थी, जो उन्होंने पकड़ रखी थी।

अब हम आयत 24 को समाप्त करते हैं: ''परन्तु फरीसियों ने यह सुनकर कहा, यह तो दुष्टात्माओं के सरदार बालज़बूल की सहायता के बिना दुष्टात्माओं को नहीं निकालता।''

यीशु के आश्चर्यकर्मों की तीन विशेषताएं थीं: (1) वे उसी समय होते थे, (2) वे सम्पूर्ण होते थे और (3) वे *विश्वास दिलाने वाले* थे। कोई इस बात से इनकार नहीं कर सकता था कि यीशु ने आश्चर्यकर्म किए। उसके विरोधियों ने भी यह इनकार करने की कोशिश नहीं की कि वह आश्चर्यकर्म कर रहा है। बल्कि उनका कहना था, ''हां, कर तो रहा है, परन्तु *जादू* से।'' इस संदर्भ में ''बालज़बूल'' ''शैतान'' के लिए इस्तेमाल किया गया है (आयत 26)। फरीसियों के कहने का अर्थ था कि ''यीशु की शैतान के साथ मिलीभगत है और इसी कारण वह दुष्टात्माओं को निकाल सकता है।''

संयोग से उनकी यह बकवास यीशु की मृत्यु के साथ खत्म नहीं हुई। कलीसिया के इतिहासकार बताते हैं कि आगामी वर्षों में यहूदियों के समर्थक यही दावा करते रहे कि यीशु जो भी करता था वह जादूगरी या वशीकरण से था। वे उसके आश्चर्यकर्मों का इनकार नहीं कर सके थे; परन्तु यह कहते थे कि वह किसी अपवित्र शक्ति के साथ काम करता था।

आयत 25 के अनुसार, यीशु जानता था कि फरीसियों के मनों में क्या है। उनके द्वारा कही गई बातें उसने किसी के मुंह से नहीं सुनी थी, अर्थात उन्होंने यीशु को बदनाम करने के उद्देश्य से कहीं और की हो। परन्तु यीशु जानता था कि उनके मन में क्या है। इसलिए कृपया ध्यान दें कि यीशु बोले जाने वाले कुछ *शब्दों* की बात नहीं कर रहा था। यीशु ने उनके *दिलों* और दिमागों को पढ़ लिया था। *इसी* के उत्तर में उसने यह बात की थी।

''परन्तु उसने उनके मन के विचार जान कर उनसे कहा, ...।'' फिर यीशु ने तीन तर्क दिए कि उनकी बात का यह अर्थ क्यों नहीं है। उसका पहला तर्क था ''तुम्हारी बात बेतुकी है।'' उसने कहा:

> जिस किसी राज्य में फूट होती है, वह उजड़ जाता है, और कोई नगर या घराना, जिसमें फूट होती है, बना न रहेगा। और यदि शैतान ही शैतान को निकाले, तो वह अपना ही विरोधी हो गया है; फिर उसका राज्य कैसे बना रहेगा? (आयतें 25, 26)।

यदि उनकी बात सही थी तो शैतान अपने ही विरुद्ध गृह-युद्ध में लगा हुआ था। वह अपनी ही बर्बादी कर रहा था। इसका अर्थ यह हुआ कि शैतान मूर्ख है। आप शैतान के बारे में जो भी कहना चाहें, कह सकते हैं क्योंकि वह है ही बुरा, परन्तु मूर्ख नहीं है। इसलिए यीशु के कहने का अर्थ था कि ''तुम्हारी बात बिल्कुल तर्कहीन है।''

दूसरा, यीशु ने कहा कि उनकी बातचीत आपस में *मेल नहीं खाती,* ''यदि मैं शैतान की सहायता से दुष्टात्माओं को निकालता हूं तो तुम्हारे वंश किसकी सहायता से निकालते हैं? इसलिए

वे ही तुम्हारा न्याय करेंगे'' (आयत 27)। उस समय भूत-प्रेत निकालना यहूदियों में आम बात थी; प्रेरितों के काम की पुस्तक में इसके उदाहरण मिल जाएंगे। परन्तु बाइबल के बाहर का इतिहास हमें बताता है कि जो काम यहूदी कर रहे थे, वे वो नहीं थे, जो यीशु और उसके चेलों ने किए। यहूदी लोग झाड़-फूंक, तन्त्र-मंत्र तथा और रहस्यवादी बातों वाला जादू-टोने की एक लम्बी प्रक्रिया वाला, एक प्रकार का काला जादू करते थे। यह यीशु द्वारा किसी दुष्टात्मा से *बात करने* और यह कहने कि ''चला जा'' से बिल्कुल अलग था। फिर भी यहूदी लोग *दावा करते थे* कि उनके चेले दुष्टात्माओं को निकालते हैं। जहां तक यीशु के तर्क की बात है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे वास्तव में निकालते थे या नहीं। ध्यान देने वाली बात यह है कि फरीसी *मानते थे* कि वे निकालते थे। इसलिए यीशु ने यह तर्कसंगत निष्कर्ष निकालने के लिए और यह दिखाने के लिए कि उनकी बात कितनी असंगत है, उनके तर्क को ही उनके विरुद्ध इस्तेमाल किया। यीशु के कहने का अर्थ होगा कि ''यदि मैं शैतान की शक्ति से दुष्टात्माओं को निकालता हूं तो तुम्हारे चेले भी इसी तरह निकालते होंगे।'' बेशक, फरीसी यह मानने को तैयार नहीं थे। इसलिए यीशु यह तर्क दे रहा था कि ''तुम बेतुकी बात कर रहे हो।''

यीशु ने आगे कहा, ''पर मैं यदि परमेश्वर के आत्मा की सहायता से दुष्टात्माओं को निकालता हूं तो परमेश्वर का राज्य तुम्हारे पास आ पहुंचा है'' (आयत 28)। यीशु यह नहीं कह रहा था कि राज्य पहले ही आ चुका था, क्योंकि प्रेरितों के काम 2 अध्याय से पहले यह नहीं आया था। बल्कि यीशु यह मान रहा था कि लोगों का अनुमान बिल्कुल सही था कि मसीहा आ चुका *था*। भजन संहिता 2 और अन्य वचनों में इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि मसीहा ने राजा बनकर आना था, और यदि राजा आ चुका था, तो इसका अर्थ हुआ कि राज्य भी आ चुका था। इसलिए यीशु कह रहा था कि दुष्टात्मा बालज़बूल की सहायता से नहीं, बल्कि उसकी सामर्थ से निकाले जा रहे थे, जो राजा बनकर आ गया था! जिस राजा की राह देख रहे थे और इस सच्चाई को वे तभी देख सकते थे जब वे अपनी आंखें और मनों को खोलते!

आयत 28 में ''परमेश्वर के आत्मा की सहायता से'' पर चिह्न लगा लें। यीशु ज़ोर देकर यह कह रहा था कि, ''मैं यह काम बालज़बूल की आत्मा से नहीं, बल्कि परमेश्वर के आत्मा की सहायता से कर रहा हूं।''

यीशु का अगला तर्क था: ''जो तुम कह रहे हो यह बिल्कुल *असम्भव* है।'' उसने कहा, ''या कोई मनुष्य किसी बलवन्त के घर में घुस कर उसका माल लूट सकता है, जब तक कि वह पहले उस बलवन्त को बान्ध न ले? तब वह उसका घर लूट लेगा'' (आयत 29)। उस संक्षिप्त दृष्टांत में (जैसे मरकुस 3 में कहा गया है) बलवन्त शैतान को कहा गया है। अपने विरोधी को कभी कमज़ोर न समझें; शैतान को *बलवन्त* विरोधी कहा गया है, परन्तु यीशु के उदाहरण के अनुसार उससे *भी ज़ोरावर* ने आ कर उसे बान्ध लिया, और उसका घर लूट लिया। दुष्ट आत्माओं को निकाल कर यीशु यही घोषणा कर रहा था।

शैतान के बान्धे जाने का विषय बहुत दिलचस्प है। शैतान को ''बान्धने'' का काम उसकी शक्ति को सीमित करके लोगों पर उसके प्रभाव को कम करके ही किया जाना था। क्रूस पर यीशु की मृत्यु के साथ ही मनुष्य-जाति पर से शैतान का अधिकार जाता रहा।[3] शैतान का बान्धा जाना उसी समय आरम्भ हो गया था जब यीशु ने जंगल में शैतान की परीक्षा का सामना किया था और

उसका यह बान्धा जाना यीशु की सेवकाई के दौरान भी जारी रहा। यीशु के क्रूस पर चढ़ाए जाने के समय शैतान के बन्धनों की रस्सियां और कस दी गईं।

यीशु इस बात पर ज़ोर दे रहा था कि शैतान पर अपनी शक्ति दिखाने के बिना और कोई तरीका नहीं है। वह यह काम शैतान *की शक्ति से* नहीं कर रहा था; बल्कि वह तो शैतान *पर अपने अधिकार* को दिखा रहा था।

जैसे वह यह कहा रहा हो कि उसके और शैतान के बीच एक भयंकर युद्ध चल चल रहा है! अगली आयत में उसने कहा कि इस आत्मिक लड़ाई में हर मनुष्य के लिए दोनों में से एक ओर होना आवश्यक है: ''जो मेरे साथ नहीं, वह मेरे विरोध में है, और जो मेरे साथ नहीं बटोरता वह बिखेरता है'' (आयत 30)। यीशु राज्य स्थापना के लिए प्रेरितों को *एकत्र* करने का प्रयास कर रहा था। दूसरी ओर फरीसी उसे बदनाम करने और उसके चेलों को बिखेरने की कोशिश कर रहे थे, जिससे वे यीशु के पीछे चलना छोड़ दें। यीशु (फरीसियों को ही नहीं, बल्कि सब सुनने वालों को, जिनमें आज के सुनने वाले भी शामिल हैं) कह रहा था कि ''यह तुम्हें निर्णय लेना है कि किस ओर जाना है!'' यीशु की दृष्टि में तटस्थ जैसी कोई स्थिति नहीं है।

चौंकाने वाली घोषणा (मत्ती 12:31, 32)

हम आयत 31 और 32 वाली ''चौंकाने वाली घोषणा'' के लिए तैयार हैं।

आयत 31 आरम्भ होती है, ''इसलिए [उस आधार पर जो कुछ अभी-अभी हुआ था, जो उन्होंने कहा था, और जो मैंने कहा है] मैं तुमसे कहता हूं कि मनुष्य का सब प्रकार का पाप और निन्दा क्षमा की जाएगी।'' यीशु कह रहा था कि ''मैं जिस पाप की बात करने वाला हूं और उस निन्दा को छोड़ जिसका मैं जिक्र कर रहा हूं, हर पाप क्षमा किया जाएगा।''

यीशु ने किस ''निन्दा'' की बात की? अनुवादित शब्द ''निन्दा'' का मूल अर्थ ''विरुद्ध बोलना'' है। पाप विशेष तौर पर परमेश्वर के विरुद्ध और पवित्र वस्तुओं के गलत इस्तेमाल को कहा जाता है। पुराने नियम में परमेश्वर की निन्दा उन पापों में थी, जिनका दण्ड मृत्यु था। उसके विपरीत यीशु ने कहा, कि ''मनुष्य का सब प्रकार का पाप और निन्दा क्षमा की जाएगी।'' पौलुस पर निन्दा करने का दोष ही था, जो क्षमा किया गया (1 तीमुथियुस 1:13, 15)।

यह कहने के बाद कि सब प्रकार की निन्दा क्षमा की जा सकती है, यीशु ने कहा, ''परन्तु पवित्र आत्मा की निन्दा क्षमा न की जाएगी'' (आयत 31)। चौंका देने वाली बात है कि नहीं?

अगली आयत में, पवित्र आत्मा की निन्दा के बारे में और स्पष्ट होता है ''जो कोई मनुष्य के पुत्र के विरोध में कोई बात कहेगा, उसका यह अपराध क्षमा किया जाएगा, परन्तु जो कोई पवित्र आत्मा के विरोध में कुछ कहेगा, उसका अपराध न तो इस लोक में और न परलोक में क्षमा किया जाएगा'' (आयत 32)।

सदियों से कई धारणाएं बनी हुई हैं कि कौन-सा पााप क्षमा हो सकता है। कइयों का कहना है कि व्यभिचार का पाप क्षमा हो सकता है। कइयों का कहना है कि हत्या का पाप क्षमा हो सकता है। इतने सालों के दौरान एक ही आम धारणा बनी है, आत्महत्या, क्योंकि यदि कोई अपने आप को स्वयं मारता है, उसे तो मन फिराने का अवसर नहीं मिलता। फिर भी वह *क्षमा न किया जाने वाला* पाप है, न कि *क्षमा न होने योग्य* पाप। यीशु ऐसे पाप की बात नहीं कर रहा था, जो किया

गया और फिर उसकी क्षमा नहीं है चाहे पापी उसके बाद कितने भी समय तक जीवित रहे।

हमें अन्धेरे में तीर नहीं चलाने चाहिए कि वह पाप कौन-सा है। यीशु ने हमें बता दिया है कि वह पाप कौन-सा है। यह ''पवित्र आत्मा के विरुद्ध पाप'' है। आयत 28 में यीशु ने कहा कि वह ''परमेश्वर के आत्मा की सहायता से'' दुष्टात्माओं को निकालता है, परन्तु फरीसियों का दावा था कि वह बालज़बूल की शक्ति से दुष्टात्माओं को निकालता है। वास्तव में फरीसियों के कहने का अभिप्राय था कि परमेश्वर का आत्मा बालज़बूल अर्थात शैतान है।

कोई कह सकता है, ''क्या आप को विश्वास है कि यीशु के कहने का अर्थ यही था?'' इसके साथ का वचन मरकुस 3 अध्याय देखें। 28 और 29 आयतों में क्षमा न किए जाने वाले पाप के विषय में बताने के बाद आयत 30 में इसकी व्याख्या की गई है, ''क्योंकि वे यह कहते थे कि उसमें अशुद्ध आत्मा है।'' यानी फरीसियों ने क्षमा न हो सकने वाला पाप किया था, क्योंकि उन्होंने कहा था कि यीशु में अशुद्ध आत्मा थी न कि *पवित्र* आत्मा।

मत्ती 12:32 में वापस आते हैं, जहां यीशु ने कहा, ''उसका अपराध न तो इस लोक में और न परलोक में क्षमा किया जाएगा।'' क्या इसका अर्थ यह है कि आने वाले युग में कुछ पाप क्षमा हो *सकते* हैं। नहीं, यह तो केवल यीशु के ज़ोर देकर कहने का ढंग है कि ''नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं, किसी सूरत में भी यह पाप क्षमा नहीं किया जा सकता।''

कुछ लोगों का मानना है कि वास्तव में फरीसियों ने, ''क्षमा न हो सकने वाला पाप नहीं किया था, यीशु तो उन्हें केवल *चेतावनी दे रहा* था।'' उनकी सोच है कि यीशु कह रहा था कि ''तुम मुझे इस पृथ्वी पर रहते ठुकरा सकते हो, पर जब पवित्र आत्मा आ कर नया नियम प्रकट करेगा और तुम उस प्रकाशन को ठुकराओ, तो तुम्हें क्षमा नहीं किया जा सकता।'' हो सकता है यीशु यही कह रहा था, परन्तु मैं इस व्याख्या से पूरी तरह सहमत नहीं हूं, क्योंकि इस व्याख्या के अनुसार फरीसियों ने क्षमा न किया जाने वाला पाप नहीं किया था। इन आयतों को स्वाभाविक रूप से पढ़ने से यह पता लगता है कि उन्होंने यह पाप किया था। यीशु की बातें केवल चेतावनी ही नहीं लगती। मत्ती 23 में यीशु द्वारा किया गया फरीसियों का अवलोकन देखें कि वे घिनौने लोग थे।

फिर यह कहने का कि ''जो कोई मनुष्य के पुत्र के विरोध में कोई बात कहेगा, उसका यह अपराध क्षमा किया जाएगा, परन्तु जो कोई पवित्र आत्मा के विरोध में कुछ कहेगा, उसका अपराध क्षमा न किया जाएगा,'' यीशु का क्या अर्थ *था?*

मत्ती 11 में वापस आते हैं: फरीसियों ने कहा था कि यीशु पेटू और पियक्कड़ है। अध्याय 12 में उन्होंने सब्त के बारे में उसके विरुद्ध बातें कीं। 12:14 में उन्होंने ''उसके विरोध में सम्मति की कि उसे किस प्रकार नष्ट करें।'' ये सब बातें एक *व्यक्ति के रूप* में उसके विरुद्ध थीं। फिर उन्होंने कहा कि यीशु शैतान की शक्ति से दुष्टात्माएं निकाल रहा था (आयत 24)। तभी यीशु ने कहा, ''तुम बहुत आगे निकल गए हो। अब तुम मुझ पर केवल मनुष्य के रूप में ही हमला नहीं कर रहे हो; अब तुम यह कह रहे हो कि मुझ में जो सामर्थ है, वह परमेश्वर की ओर से नहीं, बल्कि शैतान की ओर से है। मैं यह सब परमेश्वर के आत्मा की सहायता से कर रहा हूं पर तुम कहते हो कि मैं यह सब दुष्टात्मा की सहायता से कर रहा हूं। पवित्र आत्मा को दुष्टात्मा कहने से यह लगता है कि तुम इतने कठोर हो कि उस हद तक पहुंच गए हो, जहां से आत्मिक तौर पर तुम वापस नहीं आ सकते!''

आज आप इन लोगों द्वारा किया गया *विशेष पाप* नहीं कर सकते। यीशु आज पृथ्वी पर विचरते हुए वह आश्चर्यकर्म नहीं कर रहा, जो उस समय कर रहा था। आप यीशु की ओर इशारा कर के यह नहीं कह सकते कि वह बालज़बूल की सहायता से यह आश्चर्यकर्म कर रहा है। इसलिए आप वही पाप नहीं कर सकते। यदि आप को ऐसा लगता है कि आप ने वही पाप किया, जिसकी बात यीशु ने की थी और परेशान हैं, तो भूल जाइए। आप यह पाप नहीं कर सकते।

फिर भी आप इस प्रकार का पाप कहने का अर्थ *इसके जैसा ही* पाप कर सकते हैं! आइए इस घटना के मरकुस के वृत्तांत को देखने के लिए मरकुस 3 अध्याय में फिर चलते हैं। आयत 29 कहती है, ''परन्तु जो कोई पवित्र आत्मा के विरुद्ध निन्दा करे, वह कभी क्षमा न किया जाएगा: वरन वह पाप का अपराधी ठहरता है।''[14] कुछ पाप सदा तक रहने वाले हैं। कुछ पाप ऐसे होते हैं जिन से आप कभी भी पीछा नहीं छुड़ा सकते। कुछ पाप कभी क्षमा नहीं हो सकते।

यूहन्ना ने अपनी पहली पत्री में ऐसे पाप की बात की है:

> यदि कोई अपने भाई को ऐसा पाप करते देखे, जिसका फल मृत्यु न हो, तो विनती करे, और परमेश्वर उसे उनके लिए जिन्होंने ऐसा पाप किया है, जिसका फल मृत्यु न हो, जीवन देगा। पाप ऐसा भी होता है, जिसका फल मृत्यु है; इसके विषय में मैं विनती करने के लिए नहीं कहता। सब प्रकार का अधर्म तो पाप है, परन्तु ऐसा पाप भी है, जिसका फल मृत्यु नहीं (1 यूहन्ना 5:16, 17)।

''पाप ... जिसका फल मृत्यु है'' वाक्य पर ध्यान दें। यदि आप ने वह पाप किया है तो आप को केवल मृत्यु ही मिल सकती है। (यह मत्ती 12 की तरह ही भयानक है, कि नहीं?)

वह पाप कौन सा है, जिसका ''फल मृत्यु'' है? ''सदा का पाप'' क्या है? आइए अगले भाग में चलते हैं।

गम्भीर पेशकश (मत्ती 12:33-35)

मत्ती 12 के अगले भाग में हमें ''गम्भीर पेशकश'' मिलती है।

यीशु ने पवित्र आत्मा के विरुद्ध बोलने की अपनी बात के बाद अपने पसन्दीदा उदाहरणों में से एक दिया: ''यदि पेड़ को अच्छा कहो, तो उसके फल को भी अच्छा कहो, या पेड़ को निकम्मा कहो तो उसके फल को भी निकम्मा कहो; क्योंकि पेड़ अपने फल ही से पहचाना जाता है'' (आयत 33)। वह कह रहा था, ''तुम मेरे फल से अर्थात मेरे जीवन से मेरे स्वभाव को पहचान सकते हो। मैं लोगों को चंगाई दे रहा हूं, मैं लोगों की सहायता कर रहा हूं। तुम जान सकते हो कि मेरा स्वभाव अच्छा है, क्योंकि मेरा फल अच्छा है! फरीसियों का स्वभाव कैसा है? उनके जीवनों का फल बुरा है। इसलिए वे बुरे ही होंगे।''

ध्यान दें कि यीशु बालज़बूल की सहायता से दुष्टात्माओं को निकालने की फरीसियों की एक बात ही नहीं कर रहा था, बल्कि वह तो उनके पूरे जीवन को दिखा रहा था यानी यह कि वे कैसे लोग थे!

34 और 35 आयतों में उसने आगे कहा:

> हे सांप के बच्चो [जैसे यूहन्ना ने फरीसियों के बारे में कहा था, और जैसे यीशु ने उनके बारे में कहा[5]]! तुम बुरे होकर कैसे अच्छी बातें कह सकते हो? [ध्यान दें] क्योंकि जो मन में भरा है, वही मुंह पर आता है। भला मनुष्य मन के भले भण्डार से भली बातें निकालता है, और बुरा मनुष्य बुरे भण्डार से बुरी बातें निकालता है!

फरीसियों ने निन्दा की बातें की थीं, परन्तु उनकी निन्दा भरी बातें निकली कहां से थीं? उनकी बातें उनके *मनों से* निकली थीं। याद रखें कि यीशु उनके मनों को जानता था (आयत 25)। यीशु केवल उन *शब्दों* की बात नहीं कर रहा था जो उन्होंने बोले थे, वह तो उनके *मन* की स्थिति की बात कर रहा था।

मत्ती के अगले अध्याय पर नज़र डालें। अध्याय 13 बीज होने वाले के दृष्टांत से आरम्भ होता है। पहली भूमि जिसका उल्लेख यीशु ने किया कि वह इतनी कठोर थी कि सच्चाई का बीज उसमें न जा सका। इसलिए वह बीज वहीं पड़ा रहा और पक्षियों [शैतान] ने आ कर वह बीज चुग लिया। संदर्भ में यीशु के मन में फरीसियों के मन की बात थी, जो इतने कठोर थे कि सुसमाचार की बात उन पर असर नहीं कर सकी।

कुछ देर बाद, यीशु ने कहा:

> क्योंकि इन लोगों का मन मोटा हो गया है, और वे कानों से ऊंचा सुनते हैं और उन्होंने अपनी आंखें मूंद ली हैं; कहीं ऐसा न हो कि वे आंखों से देखें, और कानों से सुनें और मन से समझें और फिर जाएं, और मैं उन्हें चंगा करूं (मत्ती 13:15)।

यीशु फरीसियों की बात कर रहा था। उसने उनके द्वारा बोले गए शब्दों की ही नहीं, बल्कि उनके मनों की स्थिति की भी बात की थी। उनके बोल तो केवल कठोर मनों का नमूना थे। उन्होंने बार-बार उनके विरुद्ध बातें की थीं! पर जब यीशु ने एक ज़बर्दस्त तिहरा आश्चर्यकर्म किया तो भी उन्होंने उसे शैतान द्वारा किया गया हुआ बताया। तब यीशु ने कहा कि बिना किसी स्नेह के यह साबित हो गया है कि वह उस सीमा को लांघ गए हैं; जिससे मन फिराए जा सके। इसलिए उन्हें क्षमा नहीं किया जा सकता।

मैं इतना ही कह सकता हूं कि कोई भी पाप जिससे आप मन फिरा सकते हैं, क्षमा किया जा सकता है। यह कहने कि कोई ऐसा पाप कर सकता है, जिसे क्षमा करना परमेश्वर के लिए असम्भव हो, अर्थ यह है कि परमेश्वर बहुत छोटा है, और मनुष्य बहुत बड़ा। परमेश्वर कोई भी पाप क्षमा कर सकता है, जिससे आप मन फिरा सकें।

यह तथ्य रह जाता है कि आपका हृदय वैसे ही कठोर हो सकता है, जैसे फरीसियों का हुआ था। आप वहां पर पहुंच सकते हैं, जहां से आप मन नहीं फिरा सकते। बड़े ध्यान से और प्रार्थना सहित इब्रानियों 6:4-6 पर विचार करें।

> क्योंकि जिन्होंने एक बार ज्योति पाई है, और जो स्वर्गीय वरदान का स्वाद चख चुके हैं और पवित्र आत्मा के भागी हो गए हैं और परमेश्वर के उत्तम वचन का और आने वाले युग की सामर्थ का स्वाद चख चुके हैं, यदि वे भटक जाएं तो उन्हें मन फिराव के लिए

> फिर नया बनाना अनहोना है, क्योंकि वे परमेश्वर के पुत्र को अपने लिए फिर क्रूस पर चढ़ाते हैं औ प्रकट में उस पर कलंक लगाते हैं।

मुख्य वाक्यांश पर ध्यान दें, ''उन्हें मन फिराव के लिए फिर नया बनाना *अनहोना* है।'' इस सीमा तक पहुंचना सम्भव है। आप सुसमाचार को ठुकरा सकते हैं। आप उन लोगों को जो आप से प्रेम रखते और आपकी सहायता करने की कोशिश करते हैं, भी ठुकरा सकते हैं। आप बार-बार इन्हें ठुकरा सकते हैं। परन्तु जितनी बार आप इन्हें ठुकराएंगे, आप का मन उतना ही कठोर (बाइबल की भाषा में और कठोर और सुन्न) होता जाएगा और अन्त में आप उस आत्मिक सीमा को लांघ जाएंगे, जहां से मुड़ना असम्भव है।

इसलिए जैसे इब्रानियों के लेखक ने चेतावनी दी है, ''अत: जैसे पवित्र आत्मा कहता है, यदि आज तुम उसका शब्द सुनो तो *अपने मनों को कठोर न करो*'' (3:7, 8)।

सारांश

मैं फिर कहता हूं कि यदि आप को भय है कि आप ऐसा पाप कर रहे हैं; तो आप ने यह पाप नहीं किया; क्योंकि आप का दिल तो नरम है और आप को अभी भी इस बात का भय है कि कहीं आप से यह पाप न हो जाए।

फिर भी सतर्क रहने की आवश्यकता है, क्योंकि यदि हम जान-बूझ कर पाप करते हैं, चाहे *कोई भी* पाप करते और कहते हैं कि ''मुझे कोई परवाह नहीं चाहे कोई कुछ भी कहे, मैं तो ऐसे ही करूंगा, मुझे यही पसन्द है'' तो हमारे मन कठोर होते जाएंगे। यदि मैं ऐसा होता रहने देता हूं तो हमारी ऐसी स्थिति होगी कि नये सिरे से मन फिराव की कोई गुंजाइश नही होगी। बाइबल इस बारे में स्पष्ट है। यदि हम मन नहीं फिरा सकते तो हमें क्षमा भी नहीं किया जा सकता।

आप और मैं किसी के मन में नहीं झांक सकते, जैसे यीशु देख सकता है। आप और मैं यह निर्णय नहीं ले सकते कि कोई इस *स्थिति* पर कब पहुंचा है, परन्तु परमेश्वर सब जानता है। ऐसा हो जाने पर परमेश्वर उसे छोड़ देता है (रोमियों 1:24; KJV)। कितने दु:ख की बात है![6] परमेश्वर हमारे मन कोमल रखने में हमारी सहायता करे!

टिप्पणियां

[1]क्लास या उपदेश में इस्तेमाल करते समय लोगों को हाथ खड़े करने के लिए कहा जा सकता है। [2]मरकुस 3 अध्याय इसी घटना के विषय में बताता है। लूका भी इसी घटना के बारे में बताता है, परन्तु जो बात हम लूका की कहानी में से लेना चाहते हैं वह यहां नहीं, बल्कि कई अध्याय निकल जाने के बाद लूका 12:10 में मिलती है। [3]कुलुस्सियों 2:14, 15; प्रकाशितवाक्य 12:10, 11. [4]इस पद का अनुवाद ''अनन्त पाप का दोषी'' भी हो सकता है, अभी भी इसका संकेत पाप की उस किस्म की ओर है जिसे ''अनादि'' कहा जाता है। [5]मत्ती 23:33. [6]यदि इसका इस्तेमाल उपदेश के रूप में किया जाता है तो बढ़िया सार इस प्रकार है, ''हम एक निमन्त्रण गीत गाएंगे। निमन्त्रण गीत खतरनाक है, क्योंकि यदि किसी ने उसकी बात नहीं मानी है और वह नहीं मानता है तो उसका मन थोड़ा और कठोर हो जाता है। अगली बार वचन को मानना उसके लिए और कठिन हो जाएगा। मेरी प्रार्थना है कि आप के विवेक

कोमल ही रहें। परमेश्वर के लिए अपने मनों को कठोर न करें।''

एक अनादि पाप

आप की निन्दा की बात करते हुए मसीह ने इसे अक्षम्य पाप का नाम देते हुए ''अनादि पाप'' कहा। केवल यही पाप नहीं था जिसने फरीसियों का नाश किया, परन्तु उनका नाश इस पाप से हुआ। उनकी दुष्टता का बढ़ना मसीह के उनके विरोध से फूटा चाहे उन्हें पता था कि धर्मी कैसे बनना है। जो कुछ उन्हें मालूम था उसके विपरीत उन्होंने कहा कि उसमें दुष्ट आत्मा है। उन्होंने सच्चाई के लिए झूठ को, रोशनी के लिए अंधकार को, धार्मिकता के लिए बुराई को एक और प्रभु के विरुद्ध अपनी आंखें और मन बन्द कर लिए। परमेश्वर की निंदा करने के उनके ढंग से स्वर्ग की आशा मिट गई और कोई संदेह नहीं रह जाता कि आज प्रभु वैसा ही अन्धा, विवेकहीन विरोध करने से वैसे ही परिणाम होंगे।

पवित्र आत्मा के विरुद्ध सात पाप इन वचनों में देखे जा सकते हैं: (1) के विरुद्ध लालसा करता (गलातियों 5:16); (2) सामना करना (प्रेरितों 7:51); (3) शोकित करना (इफिसियों 4:30); (4) से झूठ बोलना (प्रेरितों 5:3); (5) अपमान करना (इब्रानियों 10:24); (6) की निंदा करना (मरकुस 3:29); (7) बुझाना (1 थिस्सुलीनिकियों 5:19)। परन्तु यह सपष्ट है कि हर पाप के स्वभाव में चाहे वह कोई भी पाप हो, बने रहने का परिणाम आत्मा के भीतर की आग को बुझाना हो सकता है, जिसके अन्त में अनादि मृत्यु मिलती है।

कमैंट्री ऑन मैथ्यू
बर्टन कॉफ़मैन